जैन पुराणकालीन भारत में कृषि

डॉ० देवी प्रसाद मिश्र

किसी भी समाज या सम्प्रदाय का उत्कर्ष उसकी आर्थिक सम्पन्नता पर निर्भर करता है। व्यक्ति के सांसारिक एवं भौतिक सुख का सम्बन्ध अर्थ से नियंत्रित होता है। ऐहिक दृष्टि से मानव के जीवन में अर्थ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। यद्यपि जैन धर्म निवृत्ति प्रधान है, तथापि इसमें भी अर्थ की उपेक्षा नहीं की गयी है। सांसारिक जीवन को चलाने के लिये जैन ग्रन्थों में यत्र-तत्र सामग्री उपलब्ध होती है। महापुराण में वर्णित है कि अर्थार्जन मनुष्य के जीवन का सदोद्देश्य होना चाहिए।[1] इसी पुराण में मनुष्य की आजीविका के लिये छः प्रमुख साधनों का उल्लेख हुआ है, जिसमें असि (शस्त्रास्त्र या सैनिक वृत्ति), मसि (लेखन या लिपिक वृत्ति), कृषि (खेती और पशुपालन), शिल्प (कारीगरी और कला-कौशल), विद्या (व्यवसाय) और वाणिज्य (व्यापार) हैं।[2]

प्राचीन काल से ही लोगों का प्रधान पेशा कृषि एवं पशुपालन था। उसके बाद ही अन्य व्यवसाय को अपनाया गया। प्राचीन काल से भारत में कृषि होती थी और आज भी भारत कृषि-प्रधान देश है। प्राचीन काल में कृषि देश के आर्थिक विकास का मूलाधार थी। इसी पर लगभग सभी का जीवन आश्रित रहता था। आज भी ८०% लोग कृषि पर अपनी आजीविका निर्भर करते हैं। प्राचीन काल में पर्वतीय एवं ऊँची-नीची भूमि को समतल कर, जंगलों को साफ कर तथा भूमि को खोद कर कृषि कार्य किया जाता था।[3] जैनपुराणों में क्षेत्र शब्द व्यवहृत हुआ है तथा खेत (भूमि) को हल के अग्रभाग से जोतने का उल्लेख मिलता है।[4] प्राचीन समय में हल प्रतिष्ठा का द्योतक होता था। उस समय जिसके पास जितनी अधिक संख्या में हल होते थे, वह व्यक्ति उतना ही प्रतिष्ठित एवं सम्पन्न माना जाता था। जैन ग्रन्थों में चक्रवर्ती राजा भरत के पास एक करोड़ हल होने का उल्लेख मिलता है।[5] ऐसी सम्भावना व्यक्त की जा सकती है कि सामान्य कृषकों के पास जो भी हल होते थे, वे सभी राजा के हल माने जाते होंगे। जैनेतर ग्रन्थों में हल के अतिरिक्त अन्य कृषि यन्त्रों में हेंगा (मत्य एवं कोटीश), खनित्र (अवदारण), गोदारण (कुन्दाल), खुरपी, दात्र, लवित्र (असिद), हँसिया आदि का उल्लेख मिलता है।[6] इन्हीं कृषि-यन्त्रों के माध्यम से खेती होती है।

---

१. महापुराण ४६।५५
२. वही १६।१७९
३. वही १६।१८१; विष्णुपुराण १।१३।८२; बृहत्कल्पभाष्य ४।४८९१
४. पद्मपुराण २।३, ३।६७; हरिवंश पुराण ७।११७
५. वही ४।६३; महापुराण ३७।६८
६. द्रष्टव्य—ललन जी पाण्डेय—पूर्वमध्यकालीन उत्तर भारत में कृषि व्यवस्था (७००-१२००); राजबली पाण्डेय स्मृति ग्रन्थ, देवरिया १९७६, पृ० २६५

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैन ग्रन्थों में खेतों के दो प्रकारों का वर्णन उपलब्ध होता है : (१) उपजाऊ—उपजाऊ भूमि में बीज बोने से अति उत्तम फसल उत्पन्न होती थी।[१] (२) अनुपजाऊ—ऊसर या खिल (अनुपजाऊ) भूमि (खेत)। जैन पुराणों में वर्णित है कि ऊसर भूमि में बोया गया बीज समूल नष्ट हो जाता है।[२] जैनेतर ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि ऊसर भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिये राज्य की ओर से पुरस्कार प्रदान किया जाता था।[३] जैनेतर ग्रन्थ अभिधान रत्नमाला में मिट्टी के गुणानुसार साधारण खेत, उर्वर खेत, सर्व फसलोत्पादक खेत, कमजोर खेत, परती भूमि, लोनी मिट्टी का क्षेत्र, रेगिस्तान, कड़ी भूमि, दोमट मिट्टी, उत्तम मिट्टी, नई घासों से आच्छादित भूमि, नरकुलों आदि से संकुल भूमि आदि के लिए पृथक्-पृथक् शब्द व्यवहृत हुए हैं।[४]

कृषि को सुव्यवस्थित करने एवं अधिक उपज के लिए राज्य की ओर से सहायता भी प्रदान की जाती थी। महापुराण के अनुसार राजा कृषि की उन्नति के लिये खाद, कृषि-उपकरण, बीज आदि प्रदान कर खेती कराता था।[५] इसी पुराण में अन्यत्र उल्लिखित है कि खेत राजा के भण्डार के समान थे।[६] जैन पुराणों में कृषक को कर्षक[७] और हलवाहक को कीनाश[८] शब्द से सम्बोधित किया गया है। महापुराण के अनुसार कृषक भोलेभाले, धर्मात्मा, वीतदोष तथा क्षुधा-तृषा आदि क्लेषों के सहिष्णु तथा तपस्वियों से बढ़कर होते थे।[९] कृषक हल, बैल और कृषि के अन्य औजारों के माध्यम से खेती करते थे। खेत की उत्तम जुताई कर, उसमें उत्तम बीज एवं खाद का प्रयोग करते थे। र० गंगोपाध्याय ने एग्रीकल्चर एण्ड एग्रीकल्चरिस्ट इन ऐंशेण्ट इण्डिया में गोबर की खाद को खेती के लिये अत्यन्त उपयोगी माना है।[१०] इसके अतिरिक्त खेती को सिंचाई की भी आवश्यकता होती थी। महापुराण में सिंचाई के दो प्रकार के साधनों का उल्लेख मिलता है—(१) अदेवमातृका—नहर, नदी, आदि कृत्रिम साधन से सिंचाई व्यवस्था और (२) देवमातृका—वर्षा के जल से सिंचाई व्यवस्था।[११] वर्षा समयानुकूल

---

१. पद्मपुराण २।७

२. वही ३।७०; हरिवंश पुराण ३।७०

३. नारद स्मृति १४।४

४. द्रष्टव्य—लल्लन जी गोपाल—वही, पृ० २५९

५. महापुराण ४२।१७७

६. वही ५४।१४

७. पद्मपुराण ६।२०८; महापुराण ५४।१२

८. वही ३४।६०

९. महापुराण ५४।१२

१०. लल्लनजी गोपाल—वही, पृ० २६०

११. महापुराण १६।१५७

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

एवं समय से होने पर फसल अच्छी होती थी।[1] कुआँ[2], सरोवर[3], तडाग[4] तथा वापी[5] के जल को सिंचाई के लिये प्रयोग करते थे। उस समय घण्टीतंत्र[6] (अरहट या रहट) द्वारा कुओं, तालाबों आदि से जल निकालकर सिंचाई करते थे। खेतों की सिंचाई के लिये नहरें अत्यधिक लाभप्रद थीं।[7] नहरों से नालियों का निर्माण कर कृषक अपने खेतों में पानी ले जाते थे। उस समय झील, नदी, कुआँ, मशीन कुआँ, अरहट, तालाब तथा नदी बाँध से सिंचाई की जाती थी।[8]

कृषक खेत में बीज वपन करने के उपरान्त सिंचाई कर उसकी निराई, गोड़ाई आदि करते थे। इसके अनन्तर पुनः सिंचाई की जाती थी। फसलों के पक जाने पर उसकी कटाई कर उसे खलिहान में एकत्रित करते थे। फिर बैलों से दँवरी चलाकर मड़ाई की जाती थी। मड़ाई के उपरान्त अनाज और भूसे को पृथक् करने के लिये ओसाई की जाती थी। तदनन्तर अनाज को घर ले जाते थे। खाने के लिये अनाज का प्रयोग करते थे। भूसे को बैल, गाय, भैंस को खिलाने के लिये रखते थे।[9]

खेती की रक्षा करना परमावश्यक था। बिना खेती की रक्षा के फसल का लाभ नहीं मिल सकता। इसमें कृषक की बालाएँ पशुपक्षियों से खेत की रक्षा करती थीं।[10] चञ्चापुरुष का भी उल्लेख महापुराण में हुआ है, जिनको देखकर जानवर भाग जाते थे।[11]

उपलब्ध साहित्यिक एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों[12] से उस समय अग्रलिखित अनाज होते थे—ब्रीहि, साठी, कलम, चावल, यव (जौ), गोधूम (गेहूँ), कांगनी (कंगव), श्यामाक (सावाँ), कोद्र (कोदो), नीवार, वरफा (बटाने), तिल, तस्या (अलसी), मसूर, सर्षप (सरसों), धान्य

---

१. महापुराण ४।७९; एपिग्राफिका इण्डिका, जिल्द २०, पृ० ७ पर सिंचाई के साधनों के विषय में विशेष रूप से प्रकाश पड़ता है।
२. महापुराण ४।७२
३. वही ५।२५९; पद्मपुराण २।२३
४. वही ४।७२
५. वही ५।१०४
६. पद्मपुराण २।६, ९।८२; महापुराण १७।२४; हरिवंश पुराण ४३।१२७
७. महापुराण ३५।४०
८. अपराजितपृच्छा पृ० १८८
९. महापुराण ३।१७९-१८२, १२।२४४, ३५।३०; पद्मपुराण २।१५
१०. वही ३५।३५-३६, मनुस्मृति ७।११० पर टीका
११. वही २८।१३०; देशीनाममाला २६
१२. वही ३।१८६-१८८; पद्मपुराण २।३-८;
हरिवंशपुराण १४।१६१-१६३, १९।१८, ५८।३२, ५८।२३५;
जगदीशचन्द्र जैन—जैन आगम साहित्य में भारतीय समाज, पृ० १२३-१३०;
बी० एन० एस० यादव सोसाइटी एण्ड कल्चर इन द नार्दर्न इण्डिया, पृ० २५९;
सर्वानन्द पाठक—विष्णु पुराण का भारत, पृ० १९८

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

(धनिया) जीरक (जीरा). मुद्गमाषा (मूंग), ढकी (अरहर), राज (रोंसा), माष (उड़द), निष्पावक (चना), कुलित्थ (कुलथी), त्रिपुर (तेवरा), कुसुम्भ, कपास, पुण्ड्र (पौड़ो), इक्षु (ईख), शाक आदि। इस समय के प्राप्त अभिलेखों में भी इस प्रकार के अनाज का उल्लेख यत्र-तत्र उपलब्ध होता है।[1]

२० डी०, बेली रोड,
नया कटरा, इलाहाबाद-२११००२

१. शिवनन्दन मिश्र—गुप्तकालीन अभिलेखों से ज्ञात तत्कालीन सामाजिक एवं आर्थिक दशा, लखनऊ, १९७३, पृ० ८४-८५।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org